

जीवन को खाता अकेलापन



सोचिए, रविवार की शाम आप एक भरे पूरे परिवार वाले फ्लैट में हैं। एक तरफ क्रिकेट चल रहा है, कहीं कूकर की सीटी बज रही है, तो कहीं फोन पर किसी की बात हो रही है। सभी अपने में उत्साहित दिख रहे हैं, और व्यस्त हैं। वहीं घर की महिला किचन काउंटर पर अकेली खड़ी सोच रही है कि उसे घरवालों ने कितने समय पहले सच में ध्यान से देखा था।

मजेदार बात यह है कि उसे छोड़ा नहीं गया है, न ही जानबूझकर नजरअंदाज किया गया है। फिर भी उसके भीतर-भीतर कुछ चल रहा है; एक शांत दर्द। आज के शब्दों में इसका नाम अकेलापन है। हमारा अकेलापन किसी सुनसान द्वीप जैसा नहीं है। यह एक भरी-पूरी जिंदगी के अंदर का अकेलापन है। हम इतिहास की सबसे ज्यादा कनेक्टेड पीढ़ी हैं। और कई मायनों में, सबसे अकेली पीढ़ी में से हैं।

इंसानी जीवन पर अब तक के सबसे लंबे अध्ययन में हावर्ड विश्वविद्यालय ने यह जानने की कोशिश की है कि हमें क्या चीज़ आगे बढ़ाती है। पता लगा कि वह न धन है, न यश और न ही नियंत्रित कोलेस्ट्रॉल। वह है, रिश्तों की गर्माहट। शोधकर्ता तो यह भी कह रहे हैं कि अकेलापन शरीर पर कुछ-कुछ धूम्रपान की तरह का प्रभाव डालता है। जो लोग समागम के बाहर रहते हैं, वे न सिर्फ दुखी रहते हैं, बल्कि जल्दी बूढ़े भी हो जाते हैं।

शहरी भारत के सर्वे में पाया गया है कि अकेलेपन का दर्द सबसे तेजी से युवाओं, और सबसे ज्यादा डिजिटली जानकार लोगों में बढ़ रहा है। हमने कॉन्टेक्ट को मेल-मिलाप समझ लिया है। सौ लाइक्स प्यार नहीं होते हैं।

हम आत्मनिर्भर होने के लिए नहीं, बल्कि समाज में एक-दूसरे पर निर्भर रहकर जीने के लिए बने हैं। हमें इसे भूलना नहीं चाहिए।

(‘द हिन्दू’ में प्रकाशित शिवकुमार सुंदरम के लेख पर आधारित-27/06/2026)

